

Saarth

E-Journal of Research

ISSN NO: 2395-339X

हिन्दी साहित्य और समाज

DR. AJAY K. PATEL*

सारांश:

मानव जीवन में साहित्य का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है। साहित्य के अभाव में व्यक्ति के व्यक्तित्व की कल्पना ही नहीं की जा सकती। संस्कृत की उक्ति के अनुसार-

साहित्य, संगीत कला विहीन, साक्षात् पशु पुच्छ विषाण हीनः ।

अर्थात् साहित्य, संगीत और कला से रहित व्यक्ति, बिना सींग और पूँछ के पशु समान है। साहित्य जीवन का पर्याय है तथा दोनों एक दूसरे के पूरक हैं।

साहित्य शब्द की शाब्दिक परिभाषा इस प्रकार है-‘हितेन सहितं इति साहित्यम्’ अर्थात् जिसमें सब के हित की भावना भरी हुई हो वही साहित्य है। साधारण तौर पर मनुष्य केवल अपने ही हित की बात सोचता है परन्तु साहित्य का हितचिन्तन विश्वकल्याण की भावना पर आधारित होता है। इसलिए जिस ग्रन्थ में समाज के सभी वर्ग के लोगों, यहां तक कि सभी जीव-जन्तुओं तथा प्रकृति के हित का चिन्तन होता है, वही साहित्य है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने ज्ञान राशि के संचित कोश का नाम साहित्य कहा है।

चाबिरूप शब्द: प्रस्तावना, साहित्य विशेष, साहित्य और समाज का संबंध, साहित्य समाज की नींव, समाज के नवनिर्माण में साहित्य की भूमिका, निष्कर्ष....

प्रस्तावना:

आचार्य रामचन्द्र शुक्लजी के अनुसार प्रत्येक देश का साहित्य वहां की जनता की चित्रवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब होता है। एक अंग्रेजी आलोचक का कथन है-‘Literature is the brain of humanity.’ अर्थात् साहित्य मानवसमाज का मस्तिष्क है।

साहित्य और समाज का अटूट सम्बन्ध है। साहित्य में समाज का प्रतिबिम्ब होता है। इसलिए साहित्य को समाज का प्रतिबिम्ब या दर्पण कहा जाता है। साहित्यकार समाज का प्राण होता है। वह तत्कालीन समाज की रीति-नीति, धर्म-कर्म और व्यवहार वातावरण से ही अपनी साहित्यिक रचना के लिए प्रेरणा ग्रहण करता है तथा लोक भावना का प्रतिनिधित्व करता है। समाज की जैसी भावनाएँ होंगी साहित्य भी वैसा ही होगा। यदि समाज में धार्मिक भावना अधिक होगी तो साहित्यकार उस भावना से अछूता नहीं रह सकता। इसके विपरीत -

*DR. AJAY K. PATEL Principal, Shree Kaljibhai R. Katara Arts College, Shamlaji

Saarth

E-Journal of Research

ISSN NO: 2395-339X

यदि समाज में विलासिता का बोल बाला होगा तो उस समय का साहित्य भी शृंगार की भावना को लिए हुए होगा और यदि समाज के लोगों में अपने देश को स्वतन्त्र कराने की भावना होती है, नई चेतना पैदा होती है तो उस समय के साहित्य में ये सभी बातें हमें देखने को मिलेंगी। भिन्न-भिन्न देशों में जितनी भी क्रान्तियाँ हुई हैं वे सब वहाँ के सफल साहित्यकारों की ही तो देन हैं। प्लैटो और अरस्तु के नए नए सिद्धान्तों ने राज्य के अधिकारों के स्वरूप को ही बदल दिया। जयपुर के राजा जयसिंह जिसके स्वभाव को उसके मन्त्री नहीं बदल सके, परन्तु महाकवि बिहारी के एक दोहे ने उसकी सारी जीवन पद्धति को ही बदल डाला।

कहने का भाव यह है कि हमारे पूर्वजों के काम आज भी हमें अपने प्राचीन साहित्य द्वारा प्राप्त होते हैं तथा हमारे जीवन के मार्ग को प्रशस्त करते हैं। आदि कवि वाल्मीकि जी की वाणी हमारे हृदय को आज भी पवित्र करती है। गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित 'रामचरितमानस' आज भी भारतीय समाज के लिए एक आदर्श जीवन, एक आदर्श समाज का स्वरूप अपने अन्तःकरण में समेटे हुए है। वह देश उतना ही अधिक शक्तिशाली एवं समृद्ध होगा जितना अधिक उन्नत आद समृद्धिशाली उसका साहित्य होगा।

साहित्य समाज की नींव:

साहित्य समाज की उन्नति और विकास की आधारशिला रखता है। इस संदर्भ में अमीर खुसरो से लेकर तुलसी, कबीर, जायसी, रहीम, प्रेमचंद, भारतेन्दु, निराला, नागार्जुन तक की शृंखला के रचनाकारों ने समाज के नवनिर्माण में अभूतपूर्व योगदान दिया है। व्यक्तिगत हानि उठाकर भी उन्होंने शासकीय मान्यताओं के खिलाफ जाकर समाज के निर्माण हेतु कदम उठाए। कभी-कभी लेखक समाज के शोषित वर्ग के इतना करीब होता है कि उसके कष्टों को वह स्वयं भी अनुभव करने लगता है। तुलसी, कबीर, रैदास आदि ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों का समाजीकरण किया था जिसने आगे चलकर अविकसित वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में समाज में स्थान पाया। मुंशी प्रेमचंद के एक कथन को यहाँ उद्धृत करना उचित होगा, “जो दलित है, पीड़ित है, संव्रस्त है, उसकी साहित्य के माध्यम से हिमायत करना साहित्यकार का नैतिक दायित्व है।”

समाज के वातावरण की नींव पर ही साहित्य का महल खड़ा होता है। जिस समाज की जैसी परिस्थितियाँ होंगी वैसा ही उसका साहित्य होगा। आचार्य महावीर प्रसाद का कथन नितान्त सत्य है-“साहित्य समाज का दर्पण है”। यदि हम हिन्दी साहित्य के इतिहास पर एक दृष्टि डालें तो हमें पता चलेगा कि समय और समाज के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य में भी परिवर्तन अवश्य होता है। हिन्दी साहित्य का आदि काल युद्धों का काल था। मुसलमानों ने

Saarth

E-Journal of Research

ISSN NO: 2395-339X

देश पर आक्रमण शुरू कर दिए थे। इसलिए उस काल में वीर रस प्रधान काव्य लिखे गए जिस कारण इस काल को कुछ विद्वानों ने वीरगाथा काल नाम की संज्ञा दे दी।

विदेशियों का भारत पर अधिकार हो चुका था। देश में इतने अत्याचार बढ़ गए थे कि चारों ओर से त्राहि माम् त्राहि माम् की ध्वनि सुनाई देती थी। बेसहारा जनता को अनेक प्रकार की आपत्तियों का सामना करना पड़ा। विपदाप्रस्त अब किसकी शाखा में जाए ? भगवान् के सिवा बेसहारों का सहारा कौन हो सकता था ? इसलिए भक्ति काल का उदय हुआ और कवियों ने भक्ति काव्य की उत्कृष्ट रचनाएं लिखीं।

समयने एक बार पलटा खाय। तब शुरू हुआ मुगलों का शासन मुस्लिम शासक विलासिता और ऐश्वर्य की मूर्ति थे। उन्हें सुरा सुंदरी के अतिरिक्त कुछ सूझता ही नहीं था। अतः रीतिकाल का जन्म और जन्म हुआ शृंगार पूरक रचनाओं का जिसमें नायिका भेद से लेकर नायिकाओं के नख-शिख वर्णन प्राप्त होते हैं। मुगलों का पतन होते ही भारत में विदेशी अंग्रेजी राज का बोलबाला हुआ। भारत का पश्चिम के साथ सम्पर्क हुआ। उसके साथ व्यवहार में अन्तर आने लगा। भारतीय साहित्यकारों ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में भारतीयों को प्रेरित किया। प्राचीन परम्पराओं एवं रुढ़ियों का विरोध होने लगा।

अनेक प्रकार के आन्दोलनों ने जन जीवन को प्रेरित किया। परिणामस्वरूप साहित्य में देश प्रेम की भावना और अंग्रेजों द्वारा किए जा रहे अत्याचारों के विरोध में उस समय के साहित्य में क्रान्ति के तथा देश को स्वतन्त्र करवाने के स्वर गूँज उठे।

समाज के नवनिर्माण में साहित्य की भूमिका:

किसी का सत्य था,
मैंने संदर्भ में जोड़ दिया।
कोई मधुकोष काट लाया था,
मैंने निचोड़ लिया।
यो मैं कवि हूँ आधुनिक हूँ नया हूँ
काव्य-तत्त्व की खोज में कहाँ नहीं गया हूँ?
चाहता हूँ आप मुझे
एक-एक शब्द पर सराहते हुए पढ़ें।
पर प्रतिमा- अरे, वह तो
जैसी आप को रुचे आप स्वयं गढ़ें।

उपर्युक्त पंक्तियाँ सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय की नया कवि, आत्म-स्वीकार से उद्धृत हैं। अज्ञेय ने रचना सृजन के दौरान की मनोस्थिति को बहुत ही सुंदर तरीके से यहाँ

Saarth

E-Journal of Research

ISSN NO: 2395-339X

अभिव्यक्त किया है। साहित्य का आविर्भाव भी इसी समाज से होता है जिसे रचनाकार अपने भावों के साथ मिलाकर उसे एक आकार देता है। यही रचना समाज के नवनिर्माण में पथप्रदर्शक की भूमिका निभाने लगती है। अज्ञेय मानते हैं कि साहित्यकार होने के नाते अपने समाज के साथ उनका एक विशेष प्रकार का संबंध है- समाज से उनका आशय चाहे हिंदी भाषी समाज रहा हो जो कि उनका पहला पाठक होगा, चाहे भारतीय समाज जिसके काफी समय से संचित अनुभव को वे वाणी दे रहे होंगे, चाहे मानव समाज हो जो कि शब्द मात्र में अभिव्यक्त होने वाले मूल्यों की अंतिम कसौटी ही नहीं बल्कि उनका स्रोत भी है।

साहित्य में मूलतः तीन विशेषताएँ होती हैं जो इसके महत्त्व को रेखांकित करती हैं। उदाहरणस्वरूप साहित्य अतीत से प्रेरणा लेता है, वर्तमान को चित्रित करने का कार्य करता है और भविष्य का मार्गदर्शन करता है। साहित्य को समाज का दर्पण भी माना जाता है। हालाँकि जहाँ दर्पण मानवीय बाह्य विकृतियों और विशेषताओं का दर्शन कराता है वहीं साहित्य मानव की आंतरिक विकृतियों और खूबियों को चिह्नित करता है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि साहित्यकार समाज में व्याप्त विकृतियों के निवारण हेतु अपेक्षित परिवर्तनों को भी साहित्य में स्थान देता है। साहित्यकार से जिन वृहत्तर अथवा गंभीर उत्तरदायित्वों की अपेक्षा रहती है उनका संबंध केवल व्यवस्था के स्थायित्व और व्यवस्था परिवर्तन के नियोजन से ही नहीं है, बल्कि उन आधारभूत मूल्यों से है जिनसे इनका निर्णय होता है कि वे वांछित दिशाएँ कौन-सी हैं, और जहाँ इच्छित परिणामों और हितों की टकराहट दिखाई पड़ती है, वहाँ पर मूल्यों का पदानुक्रम कैसे निर्धारित होता है?

समाज के नवनिर्माण में साहित्य की भूमिका के परीक्षण से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि साहित्य का स्वरूप क्या है और उसके समाज दर्शन का लक्ष्य क्या है? **“हितेन सह इति सष्टिमूह तस्याभावः साहित्यम्।”** यह वाक्य संस्कृत का एक प्रसिद्ध सूत्रवाक्य है जिसका अर्थ होता है साहित्य का मूल तत्त्व सबका हितसाधन है। मानव अपने मन में उठने वाले भावों को जब लेखनीबद्ध कर भाषा के माध्यम से प्रकट करने लगता है तो वह रचनात्मकता जानवर्धक अभिव्यक्ति के रूप में साहित्य कहलाता है। साहित्य का समाजदर्शन शूलकंटों जैसी परंपराओं और व्यवस्था के शोषण रूप का समर्थन करने वाले धार्मिक नैतिक मूल्यों के बहिष्कार से भरा पड़ा है। जीवन और साहित्य की प्रेरणाएँ समान होती हैं। समाज और साहित्य में अन्योन्याश्रित संबंध होता है। साहित्य की पारदर्शिता समाज के नवनिर्माण में सहायक होती है जो खामियों को उजागर करने के साथ उनका समाधान भी प्रस्तुत करती है। समाज के यथार्थवादी चित्रण, समाज सुधार का चित्रण और समाज के प्रसंगों की जीवंत अभिव्यक्ति द्वारा साहित्य समाज के नवनिर्माण का कार्य करता है।

Saarth

E-Journal of Research

ISSN NO: 2395-339X

प्रेमचंद का किसान-मज़दूर चित्रण उस पीड़ा व संवेदना का प्रतिनिधित्व करता है जिनसे होकर आज भी अविकसित एवं शोषित वर्ग गुज़र रहा है। साहित्य में समाज की विविधता, जीवन-दृष्टि और लोककलाओं का संरक्षण होता है। साहित्य समाज को स्वस्थ कलात्मक ज्ञानवर्धक मनोरंजन प्रदान करता है जिससे सामाजिक संस्कारों का परिष्कार होता है। रचनाएँ समाज की धार्मिक भावना, भक्ति, समाजसेवा के माध्यम से मूल्यों के संदर्भ में मनुष्य हित की सर्वोच्चता का अनुसंधान करती हैं। यही दृष्टिकोण साहित्य को मनुष्य जीवन के लिये उपयोगी सिद्ध करते हैं।

साहित्य की सार्थकता इसी में है कि वह कितनी सूक्ष्मता और मानवीय संवेदना के साथ सामाजिक अवयवों को उद्घाटित करता है। साहित्य संस्कृति का संरक्षक और भविष्य का पथ-प्रदर्शक है। संस्कृति द्वारा संकलित होकर ही साहित्य 'लोकमंगल' की भावना से समन्वित होता है। सुमित्रानंदन पंत की पंक्तियाँ इस संदर्भ में कहती हैं कि

वही प्रज्ञा का सत्य स्वरूप

हृदय में प्रणय अपार

लोचनों में लावण्य अनूप

लोक सेवा में शिव अविकार।

उन्नीसवीं एवं बीसवीं शताब्दी को भारतीय साहित्य के सांस्कृतिक एवं समाज निर्माण की शताब्दी कहा जा सकता है। इस शताब्दी ने स्वतंत्रता के साथ-साथ समाज सुधार को भी संघर्ष का विषय बनाया। इस काल के साहित्य ने समाज जागरण के लिये कभी अपनी पुरातन संस्कृति को निष्ठा के साथ स्मरण किया है, तो कभी तात्कालिक स्थितियों पर गहराई के साथ चिंता भी अभिव्यक्त की।

निष्कर्ष:

आठवें दशक के बाद से आज तक के काल का साहित्य जिसे वर्तमान साहित्य कहना अधिक उचित होगा, फिर से अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़कर समाज निर्माण की भूमिका को वरीयता के साथ पूरा करने में जुटा है। वर्तमान साहित्य मानव को श्रेष्ठ बनाने का संकल्प लेकर चला है। व्यापक मानवीय एवं राष्ट्रीय हित इसमें निहित हैं। हाल के दिनों में संचार साधनों के प्रसार और सोशल मीडिया के माध्यम से साहित्यिक अभिवृत्तियाँ समाज के नवनिर्माण में अपना योगदान अधिक सशक्तता से दे रही हैं। हालाँकि बाजारवादी प्रवृत्तियों के कारण साहित्यिक मूल्यों में गिरावट आई है परंतु अभी भी स्थिति नियंत्रण में है।

Saarth

E-Journal of Research

ISSN NO: 2395-339X

आज आवश्यकता है कि सभी वर्ग यह समझें कि साहित्य समाज के मूल्यों का निर्धारक है और उसके मूल तत्वों को संरक्षित करना जरूरी है क्योंकि, साहित्य जीवन के सत्य को प्रकट करने वाले विचारों और भावों की सुंदर अभिव्यक्ति है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि साहित्य और समाज का घनिष्ठ एवं अटूट सम्बन्ध है। साहित्य समाज को निर्माण के पथ पर अग्रसर करता है क्योंकि समाज के विचारों, भावनाओं और परिस्थितियों का प्रभाव साहित्यकार और उसके साहित्य पर निश्चित रूप से पड़ता है। इसलिए साहित्य और समाज को पृथक्पृथक् नहीं किया जा सकता।

संदर्भ सूची

1. आचार्य रामचन्द्र, शुक्ल (2013). हिंदी साहित्य का इतिहास. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन. पृ.54.
2. हिंदी सेवी सम्मान योजना
3. <http://ignited.in>
4. <https://www.mycoaching.in/2019/08/sahitya-aur-samaj.html>
5. <https://www.freejobstudy.com/sahitya-aur-samaj-essay-in-hindi/>
6. <https://www.thegkstudy.com/साहित्य-और-समाज-पर-निबंध/>
7. <https://www.sanjutechs.com/sahitya-aur-samaj-essay-in-hindi/>